OPEN ACCESS

AGPE The Royal Gondwana Research Journal of History, Science, Economic, Political and Social Science
ISSN (P): 2582:8800 | A Peer reviewed| Multidisciplinary | Annually
Volume 01 | Issue 01| March 2019| Page No. 68-71

आजादी और आदिवासी

डॉ. अरविंद कुमार गोंड
पुर्व प्राचार्य - राजकीय संस्कृत महाविद्यालय
झॉसी, इलाहबाद (प्रयागराज), उत्तर प्रदेश

~~~~~~

आजादी से पुर्व हम अंग्रेजो के गुलाम थे। अपना राज्य अपना शासन स्थापित करने के लिऐ आजादी के महानायकों के नेतृत्व में स्वतंत्रता संग्राम लढा गया। ‘‘स्वराज हमारा जन्म सिध्द् अधिकार है’’ हम देश मे राज्य की स्थापना करेंगे। जैसे नारों के साथ महात्मा गॉधी के नेतृत्व में महात्मा गॉधी के सपनों का भारत बनाने के लिऐ पुरे देश की जनता स्वतंत्रता संग्राम मे कुद पडी । इससे हर प्रदेश की आदिवासी जनता ने भी खुब बढ-चढकर हिस्सा लिया और अनेकों आदिवासी विर सपुतोंने अपने प्राणों की आहूती दी। लाखों क्रांतीकारीयों के बलिदान से १५ अगस्त १९४७ ई.स को देश आजाद हुआ। अंग्रेजों के हाथ से निकलकर राज सत्ता हम भारतीयों के हाथ मे आ गयी । पुरे देश में खुशी की लहर दौड गयी की अब हम लोकतंत्र में खुली सांस लेकर गॉधीजीं के सपनों का भारत बना लेंगे ।

किन्तु विचार करने पर लगता है की हम पुरी तरह से आजाद नही हुऐ हैं, केवल सत्ता का हस्तांतरन हुआ है। लोकतंत्र के नाम पर हमे सिर्फ एक वोट देने भर का ही अधिकार मिला है। शेष सब आज भी यथावत है, पुर्ववत है। राजनेताऔं की स्वार्थ लिप्सा, परिवारवाद और शासन सत्ता पर अधिकार ने आम जनता के बिच सामाजिक, आर्थिक, राजनैतीक, शैक्षिक, धार्मिक आदि क्षेत्रों में विषमता की ऐसी गहरी खाई पैदाकर दी है की, आम आदमी ठगा सा महसुस कर रहा है। हताश नजरों से हाथ मलता हुआ चुपचाप आवाक देख रहा है। एक के पास सबकछु है तो दुसरों के पास कुछ भी नही है। उनका तिनका-तिनका बिखर गया है और इज्जत आबरू तार-तार हो गयी है। गॉधीजी के सपनों का भारत सपना ही रह गया है। पुंजीवादी धारा ने लोकतंत्र के तटबंधोको पुरी तरह से बहाकर सामन्ती जल-प्लावन की स्थिती पैदा कर दी है। आदिवासी इलाकों मे स्थिती और भी अधिक भयावह और चिन्ता जनक है । जंगलों मे रहने वाले अशिक्षीत, निरक्षर, गरीब आदिवासी सर्वहारा हो गये है।

सदियों से जंगलों मे निवास करनेवाले आदिवासी निराश्रीत हो गये है। उनके भूभागों पर खेत - खलिहानों पर, सदी और तालाकें पर बडे-बडे उदयोग लगाने के नाम पर सरकार ने कब्जा कर लिया है। कोयला, लोहा आदि बहुमूल्य खनिज पदार्थों के उत्खनन के नाम पर
~~~~~~

आदिवासीयों की जमिनों एंव पहाडों से बेदखल कर दिया गया है। अनपढ, गरीब एंव असहाय आदिवासी बार-बार विस्थापित एंव पलायन की मार झेल रहा है। विस्थापित एंव पलायन के बाद उसकी आर्थिक, सामाजिक, शैक्षिक और शारिरीक स्थ्ती और भी अधिक खराब हो जाती है। वन माफिया, खनन माफिया, शिक्षा माफिया, शराब माफिया आदि असामाजिक और असंसदीय लोग आदिवासीयों की बची -खुची हालत को और भी अधिक बदतर कर देते है। अन्ततः गरीब, अनपढ असहाय आदिवासी रोजी रोटी की तलाश मे शहरों की और पलायन करता है और अलिनवस्तियों मे सडक के किनारे झुग्गी- झोपडी डालकर भीख मांगता है या हाथतोड मेहनत मजदुरी कर अपने बच्चों का पेट पालता है। लोकतन्त्र के नाम पर आदिवासीयों के संबन्ध मे जमिनी सच्चाई यही है। सरकारे आदिवासीयों के उत्थान एंव विकास के नाम पर बडे-बडे वादें करती है, बडी योजनांऐ चलाती है किंतु आदिवासीयों का सारा हक्क एंव सुविधाऐ स्थानिय राजनेता, कार्यकर्ता, अधिकारी एंव कर्मचारी मिल बॉटकर खा जाते है। अनपढ एंव असहाय आदिवासीयों को पता तक नही चलता कागजों पर सबकुछ हो जाता है। आदिवासीयों को भले कुछ पता नहो किंतू सरकारों को सबकछु पता रहता है। फिर भी वह अनजान एंव अन्धी बनकर कान मे तेल डाले पडी रहती है।

शोषन, उत्पीडन, विस्थापन एंव पलायन की यह प्रक्रिया आजादी के बाद से ही शुरू होगई थी जा आजभी बद-बदस्तूर जारी है। आदिवासी स्थलों मे बडे-बडे बान्धों की स्थापना , बडे-बडे उद्योगों का मकडजाल और खनन, स्थलों की पृष्टिभूमी पर लिखी गई बडे बडे विध्द्रानों , शोधकर्ताओं एंव प्रहरी पलकारों की रिपोर्ट इसके प्रबल प्रमाण है, ऐतिहासीक साक्ष्य है। इसकी कडवी सच्चाई को नकारा नही जा सकता । आदिवासी आज की तारीख मे न तो जंगल का रहा न ही शहरों का हो पाया है। आज तो वह अपने अस्तित्व एंव पहचान को बचाने के लिऐ जुझ रहा है, रात दिन संघर्ष कर रहा है। और आज भी कुछ ऐसे लोग है जिन्हे विलुप्त करने की गहरी साजिश रचने मे मशगुल है। आदिवासीयों के जल जंगल एंव जमीन पर कब्जा जमायें लोग एंव माफिया अपने प्रभाव से शासन सत्ता एंव मा.न्यायालयों मे अनावश्यक एंव उलझाउ वादों का सहारा लेकर आदिवासीयों के अस्तित्व पर नित्य नया संकट पैदा कर दे रहे है। अनपढ, गरीब एंव असहाय आदिवासी इनका कोई प्रतिकार नही कर पाता चुपचाप सारा अत्याचार सहता रहता है। सरकारे सबकुछ जानते हुवे भी अनजान बनी रहती है। उलटें साजिश कर्ताओं का ही साथ देती है।

उत्तर प्रदेश मे गोंड आदिवासीयों का अस्तित्व मिटाने के लिऐ कई वर्षोंसे इनका जाती प्रमाण पता ही नही बनाया जा रहा है। जिससे इनके बच्चे न तो पढ पाते है और न ही सरकारी सुविधाओं का लाभ उठा पाते है। जबकी ब्रिटीश काल में १९२१, १९३१ से की गयी जनगणना के अनुसार पुरे प्रदेश के प्रत्येक जनपद में गोंड जाती की भारी जनसंख्या निवास करती है। यह बात शासन, सत्ता और एस.टी कमिशन को भी अच्छी तरह पता है। फिर भी कोई कार्यवाही नही की गयी है।

मुलतः आजादी के सत्ता का हस्तांतरन होते ही सामन्तवादी शक्तियॉ लोकतांत्रिक वेशभुषा धारण कर छद्मवेश मे भारतिय राजनिती मे घुस गया और सांसद, विधायक आदि बनकर अपनी जडे मजबुत करने लगी। इनके चलते आम आदमी लोकतांत्रिक मुल्यों से वंचित हो गया और उसकी स्थिती जैसी की तैसी ही रह गयी। लोकतंत्र का सारा सुख राजनेता, सांसद, विधायक लेने लगे।

इस संबंन्ध मे अदम गोंडवी की यह पंक्ति ध्यान देने योग्य है।

''काजू-भूनी प्लेंट में, व्हिस्की गिलास में,
आया है रामराज, विधायक निवास में।''

आज भारतिय लोकतंत्र की वास्तविक स्थिती यही है, आज लोकतंत्र मंत्रीयों, सासंदो, विधायकों एंव उनके परीजनों तथा रिशेतेदारों तक सिमीत हो गया है। राजनेता के संबन्ध मे पद्मश्री कवी श्री अशोक चक्रधर की यह पंक्ति भी विचारणीय है।

अनेक काराः, बंगला अनेकाः
अनेक सुराः, सुन्दरी अनेकाः।

आज के लोकतंत्र की कडवी सच्चाई को और भी अधिक स्पष्ट करते हुऐ सुदामा पांडे 'धुमिल' ने लिखा है।

''मगर मै जानता हूं की मेरे देश का समाजवाद
माल गोदाम मे लटकती हुई उन बाल्टियों की तरह है।
जिस पर आग लिखा है
उसमें बालू और पानी भरा है।''

राजनेताओं के दोहरे चरित्र और लोकतंत्र पर उनकी अठाधीशी पर 'धुमील' ने आगे यह भी जोरदार शब्दों मे कहा है।

''एक आदमी
रोटी बेलता है
एक आदमी रोटी खाता है।
एक तिसरा आदमी भी है
जो न रोटी खाता है और न रोटी बेलता है
वह सिर्फ रोटी से खेलता है।
मै पुँछता हूँ .....
वह तिसरा आदमी कौन है?
देश की सांसद मौन है। ..... (संसद से सडक तक)

राजनेताओं के इस दोहरे चरित्र ने ही देश में दो तरह की स्थितीयॉं पैदा कर दी है जिसे '' इंडिया बनाम भारत'' कहा जाने लगा है। आज तक लोग अंग्रेजो की तरह 'इंडिया' मे बडे शान शौकत एंव सुख सुविधा से रह रहे है और बहुत सारे लोग गुलामों की तरह 'भारत' मे रह रहे है।जिसमें समाज के सबसे निचले पायदान पर खडे आदिवासी भी है।

५ जुलाई १९८८ को 'विदिशा' मध्य प्रदेश की एक गोष्ठी में अदम गोंडवी ने यह पंक्ति कह दी थी -

''फटे कपडों मे तन ढॉके गुजरता हो जहॉ कोई।
समझ लेना वो पगडंडी 'अदम' के गॉव जाती है।''

आगे 'गोंडवी' ने यह भी कहॉं है -

तुम्हारी मेज चॉदी की, तुम्हारे जाम सोने कें
यहॉ जुम्मन के घर मे आज भी फुटी रकाबी है।

दुनिया के सबसे बडे लोकतांत्रिक देश में, कानुन के शासन में आखिर कहॉं-कहॉं खामी रह गयी है की 'धनी' , धनी होता जा रहा है और 'गरीब' और भी अधिक गरीब होता जा रहा है।

कई जंगलो, पहाडों और नदीयों की लहरों पर शासन करने वाले लोग आज बार-बार के विस्थापन, पलायन, उत्पीडन एंव शोषन का शिकार होकर बेरोजगारी, कंगाली एंव भूखमरी से विवश होकर भीख मॉंगने के लिऐ मजबूर हो गये है। उनकी समस्या, उनकी परेशानी, उनके अधिकारों पर ध्यान देनेवाला कोई नही रह गया है।

यह सभी जानते है की लोकतंत्र में, कानुन के राज मे न्यायपालिका सबसे मजबुत स्तंभ होती है और सब जगह हारा - थका आदमी अन्ततः विवश होकर न्यायपालिका की शरण लेता है। किन्तू न्याय की प्रक्रिया इतनी जटील, खर्चिली एंव दिर्घकालीक है की अनपढ, गरीब एंव असहाय्य आदिवासी न्यायालय नही जा पाता है। उसमें भी

न्याय की प्रक्रिया निचली अदालत (जिला कचेहरी) से शुरू होकर मा. सुप्रीम कोर्ट तक जाती है। शोषित पिडीत होने के बाद भी असहाय्य आदिवासी न्याय के लिऐ जिला कचेहरी भी नही जा पाता, सुप्रीम कोर्ट तो उसके लीऐ कल्पना के बाहर है। कुछ इतने संपन्न, पढे लिखे एंव पहूँचे लोग है की सुप्रीम कोर्ट मे मुकदमा लडना उनके लिऐ फैशन सा हो गया है।

ऐसे ही लोग आदिवासीयों के कमियों का फायदा उठाकर हायकोर्ट, सुप्रिम कोर्ट मे फर्जी मुकदमे कायम कर आदिवासीयों व्दारा काई प्रत्यूत्तर न देने पर अदालत मे अपने पक्ष मे निर्णय कराकर इन्हे अधिकार विहीन कर देते है और इनका जल, जमिन, जंगल हडप लेते है। आदिवासीयों की इस समस्या कि और सरकार को विशेष रूप से ध्यान देना चाहिऐ और आदिवासी समाज के प्रगत वर्ग को भी इसके लिऐ आगे आना चाहीऐ।

पंच सितारा होटलों मे बैठकर आदिवासीयों की समस्याओं पर विचार विमर्श करने लोग इनके संबंन्ध में सही निर्णय नही ले सकते । यह तो आदिवासीयों के बिच में बैठकर उनकी समसयाओं को देखकर-सुनकर एंव समझकर ही सही निर्णय किया जा सकता है। जिन्होने उन के बद से बदत्तर होते हालात को नजदीक से देखा नही, समझा नही वे उनका उद्धार कैसे कर सकते है? इस सम्बन्ध में सुदामा पांडे 'धुमिल' की यह पंक्ति बहुत सार्थक है -

'' लोहे का स्वाद लुहार से मत पुछो
उस घोड़े से पुछो जिसके मुँह में लगाम पड़ी है। ''

पुरे देश मे केवल गोंड आदिवासीयों की जनसंख्या लगभग १७ करोड है। इसके बाद भी ये भयंकर शोषन, उत्पीडन, विस्थापन और पलायन की भयावह पीड़ा का दंश झेल रहे है। यदी संपुर्ण आदिवासी सम्वर्ग की जनसंख्या मिला दी जाऐ तो यह ३५-४० करोड से कम नही होगी। इतनी बडी आबादी को उनके संवैधानिक एंव मौलिक अधिकारों को प्रदान करते हुऐ विकास की मुख्यधारा में लाना देश की एकता-अखंडता, मजबुती एंव सम्पुर्ण विकास के लिए अत्यावश्यक है। इन्हे वंचित कर हम शक्तिशाली एंव सर्व सम्पन्न भारत की संकल्पना को साकार नही कर सकते। हम आदिवासीयों के साथ हो रहे अन्याय एंव अत्याचार की कडवी सच्चाई को बखुबी समझना होगा और उसका सार्थक समाधान निकालना होगा ।

आजादी के ७१ वर्ष बित जाने के बाद भी आदिवासीयों की यह दुर्दशा क्यों हुई? कैसे हुई ? यह एक बडा भारी यक्ष प्रश्न है और आदिवासी समाज वह बार-बार जानना चाहता है।

'' तू इधर-उधर की बात मत कर,
ये बता कारवॉ क्यों जुटा?
हमें राहजनों से कोई गिला नही,
तेरी रहबरी का सवाल है। ''

■■■■